बनाम जन

नाट्य चिंतन के गति अवरोधक और अंधे मोड़
राजेश जोशी की टिप्पणियाँ

बनास जन

साहित्य-संस्कृति का संचयन

नाट्य चिन्तन के गति अवरोधक और अंधे मोड़

राजेश जोशी की हिन्दी नाटक पर कुछ टिप्पणियाँ

परामर्श : प्रो. काशीनाथ सिंह, वाराणसी
डॉ. ममता कालिया, दिल्ली
डॉ. दुर्गाप्रसाद अग्रवाल, जयपुर
प्रो. माधव हाड़ा, उदयपुर
श्री महादेव टोप्पो, राँची

सम्पादक : पल्लव

सहयोग : गणपत तेली, भँवरलाल मीणा

कला पक्ष : निकिता त्रिपाठी

सहयोग राशि : 40 रुपये (यह अंक)–डाक द्वारा मँगवाने पर–65 रुपये
80 रुपये (संस्थागत)–डाक द्वारा मँगवाने पर–105 रुपये
6000 रुपये–आजीवन (व्यक्तिगत)
10,000 रुपये–आजीवन (संस्थागत)

समस्त पत्र व्यवहार : पल्लव
393, डी.डी.ए., ब्लॉक सी एंड डी
कनिष्क अपार्टमेंट, शालीमार बाग, दिल्ली-110088
ह्वाट्सअप : +91–8130072004 (केवल लिखित संदेश हेतु)
ई-मेल : banaasjan@gmail.com
वेबसाइट : www.notnul.com

कृपया रचनाएँ भेजने के लिए सिर्फ ई-मेल का उपयोग करें। आग्रह है कि इस संबंध में पूछताछ न करें। 'बनास जन' में सभी रचनाओं का स्वागत है।

नोट : प्रकाशित रचनाओं से संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं।
संपादन एवं सह संपादन पूर्णतः अवैतनिक।
समस्त कानूनी विवादों का न्याय क्षेत्र दिल्ली न्यायालय होगा।

स्वामी-संपादक-प्रकाशक-मुद्रक पल्लव द्वारा 393, डी.डी.ए., ब्लॉक सी एण्ड डी, कनिष्क अपार्टमेंट, शालीमार बाग, दिल्ली-110088 से प्रकाशित और प्रोग्रेसिव प्रिंटर्स, झिलमिल इंडस्ट्रीयल एरिया, जी.टी. रोड, शाहदरा, दिल्ली-110095 से मुद्रित।

BANAAS JAN
Peer Reviewed Journal
(A Collection of Literature)

ISSN 2231–6558

अनुक्रम

अपनी बात	4
हिन्दी में नाट्य चिन्तन के गति अवरोधक और अंधे मोड़	5
नाटकों के बारे में प्रसाद : यथार्थवाद की दूसरी दृष्टि	11
प्रसाद के नाटकों की कविता	16
बिहाइंड दॅ पेन्टेड फेस : रंगे हुए चेहरों की नेपथ्य कथा	21
शौकिया रंगकर्म : कुछ निजी अनुभव	24
समकालीन रंगकर्म : कुछ फुटकर नोट्स	27
क्या नाटक की भाषा बदल रही है	29
इप्टा की स्वर्ण जयन्ती (एक पत्र)	32
कारन्त का रंगमंच : कुछ पर्सनल नोट्स	35
बंसी कौल : एक बेतरतीब डायरी के कुछ हिस्से	39
भानु भारती : कथा कही एक जले पेड़ ने	42
फ़ज़ल ताबिश के दो नाटक	45
एक और कथा–शकुंतला की	48
फेदरिको गार्सिया लोर्का और मोची की अनोखी बीवी	51

अपनी बात

राजेश जोशी कवि, कथाकार और नाटककार हैं। हमारी भाषा में ऐसे अनेक रचनाकार मिल जाएँगे जिन्होंने एक से अधिक विधाओं में लिखा। राजेश जोशी ने कविता के साथ-साथ कहानियाँ, नाटक और आलोचना में भी अपना योगदान दिया। अब यह एक और बात है कि कोई कविताएँ, कहानियाँ, नाटक, आलोचना इत्यादि लिखे लेकिन उन विधाओं के बारे में पर्याप्त व्यापकता और गहराई से चिंतन भी करे। राजेश जी ने ऐसा किया है। उनकी किताब एक कवि की नोटबुक के क्रमशः तीन भाग प्रकाशित हुए और माना गया कि यह किताब उस रिक्ति को पूरा करती है जो आलोचकों से रह गई थी। याद आता है एक बार वर्ष 2018 में उन्होंने दिल्ली में एक वक्तव्य दिया था कि भारतीय संस्कृत वांङमय में माना गया है कि 'जो नाटक नहीं लिख सकता वह कवि नहीं है।' इस बात से उनके अनेक प्रशंसक नाराज भी हुए यद्यपि वे भास का उदाहरण देकर इसे स्पष्ट कर रहे थे कि यह उनकी धारणा नहीं है। इसी वक्तव्य में उन्होंने यह भी कहा था कि ''नाटक सामूहिक विधा है जिसके कम से कम चार पाठ सम्भव हैं। ये पाठ क्रमशः नाटककार, निर्देशक, अभिनेता और दर्शक के हैं। हमें नाटक के सम्बन्ध में इन समझौतों को स्वीकार करना पड़ता है क्योंकि यह व्यक्तिगत नहीं समूह की विधा है।'' लेकिन तब बात आई गई हो गई। नाटक के सम्बन्ध में व्यवस्थित और गंभीर बातों की रिक्ति महसूस की जाती रही।

यह अंक ऐसी ही रिक्ति को भरने का विनम्र प्रयास है। राजेश जी ने अपने नाटकानुभवों पर समय समय पर कुछ लिखा-कहा, जिसमें से कुछ ही संकलित हो सका। शेष असंकलित को यहाँ एक साथ पढ़ा जा सकता है। पाठक देखेंगे कि राजेश जोशी की रंग चिंताएँ भारतेन्दु से भानु भारती तक फैली हुई हैं। वे नाटकों के स्वरूप और मंचन की समस्याओं पर बहुत तरह से विचार करते हैं। राजेश जोशी रचना की सोद्देश्यता के विचार से सहमत कलाकार हैं और उपनिवेशवाद उन्हें मनुष्यता के लिए एक व्याधि लगता है। आकस्मिक नहीं कि जिस भारतीय रंगमंच की कल्पना भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान हमारे कलाकारों ने की, वह चिंता जोशी की भी है। यहाँ जयशंकर प्रसाद के नाटकों और रंगचिंतन पर उनके दो लेख हैं। अपनी बात कहने के लिए उन्हें किसी बंधे हुए रूप की जरूरत नहीं है और तभी इप्टा के पचहत्तर वर्ष के अवसर पर उन्हें अपनी बातें एक चिट्ठी के मार्फत स्पष्ट करना अधिक सुगम महसूस हुआ। समकालीन नाटककारों बंसी कौल, भानु भारती, फजल ताबिश, राधावल्लभ त्रिपाठी पर स्वतंत्र लेख भी इस अंक का आकर्षण हैं। बी वी कारन्त की रंग शैली पर विचार करते हुए वे समकालीन रंगमंच के अनेक पक्षों पर अपनी दृष्टि ले जाते हैं।

पल्लव

राजेश जोशी

हिन्दी में नाट्य चिन्तन के गति अवरोधक और अंधे मोड़

शर्लेट केशमन ने सृष्टि की कल्पना करते हुए यह माना था कि ब्रह्मा ने सृष्टि को जब प्राणियों और मनुष्यों से आवास्य कर दिया तो यह भूमण्डल मंच एक दिव्य और शाश्वत नाटक बन गया। इस तरह पूरा जीवन ही एक नाटक है और सारे प्राणी और मनुष्य इसके अभिनेता हैं। यह कथा नाटक को उतना ही प्राचीन मानने का आग्रह करती है जितना कि मनुष्य स्वयं है। यह सर्वमान्य तथ्य है कि भारत में नाट्य चिन्तन की एक सुदीर्घ परम्परा संस्कृत में रही है। संभवत: इसलिए भी नाट्यशास्त्र को पाँचवाँ वेद कहा गया होगा। नाट्यशास्त्र को वेद कहा जाना भी एक बड़ी दुर्घटना है। उसने नाट्यशास्त्र से असहमति के दरवाज़े बंद कर दिये या कम से कम उनको उढ़का दिया। मुझे लगता है कि नाट्यशास्त्र और उससे जुड़े नाट्य चिन्तन की परम्परा ही हिन्दी में नाट्य चिन्तन के लिए सबसे बड़ा गति अवरोधक रही है। नाट्यशास्त्र और संस्कृत भाषा के पाण्डित्य का एक ऐसा आतंक पूरे बौद्धिक समाज पर बना रहा है और संस्कृत के आचार्य इसे लगातार बनाये रखने के पूरे उपक्रम करते रहे हैं कि हम नाट्यशास्त्र को चुनौती देने या उससे टकराने या उसका विरोध करने का साहस ही कभी नहीं कर पाये। मुठभेड़ के अभाव में वह वेद-वाक्य बन गया। इस ओर भी हमारी नज़र नहीं गयी कि नाट्यशास्त्र से पहले भी नाटक लिखा गया था। और नाट्य चिन्तन की भी एक परम्परा मौजूद थी। भरत नाट्यशास्त्र के पूर्ववर्ती आचार्यों में शिलालिन और कृशाश्व का उल्लेख पाणिनि की अष्टाध्यायी में मिलता है। लेकिन इनके नाट्यसूत्रों का नाट्यशास्त्र बन जाने के बाद लोप हो गया। इन दोनों आचार्यों के बाद कोहल भरत पूर्व के तीसरे सबसे बड़े आचार्य हैं। नाट्यशास्त्र के अन्तिम अध्याय में कोहल, वात्स्य, शाणिल्य और घूर्तिल, इन चार नाट्याचार्यों का उल्लेख मिलता है। ये चारों ही भरत से पूर्व के आचार्य हैं। अभिनवगुप्त ने नाट्यशास्त्र से कोहलाचार्य के मतों की भिन्नता का उल्लेख किया है। भास जैसे बड़े नाटककार नाट्यशास्त्र रचे जाने से या तो पहले हो चुके थे या उन्होंने नाट्यशास्त्र की मान्यताओं की जानबूझकर अवहेलना की। भास के नाटकों का प्रारम्भ नांदीपाठ से नहीं होता। बाणभट्ट ने भास के नाटकों की भिन्नता को रेखांकित करते हुए लिखा है कि ये नाटक सूत्रधार से शुरू होते हैं। इन नाटकों में प्ररोचना का अभाव है जिसमें नाटककार स्वयं अपना परिचय देता है। परिचय में वह अपना नाम, अपने माता-पिता, कुटुम्बियों का नाम और अपने निवास स्थान का परिचय देता है। भास के नाटकों में लेखक का परिचय नहीं है। यह विलक्षणता उन्हें अन्य संस्कृत नाटकों से अलग करती है। भरत द्वारा प्रतिपादित नाट्य नियमों से ये नाटक इस अर्थ में भी अलग हैं कि इनमें मृत्यु तथा लड़ाई-झगड़े रंगमंच पर ही प्रदर्शित होते हैं। अभिषेक, पूजा, शपथ या अश्रु प्रक्षालन के लिए मंच पर ही जल का उपयोग किया गया है। 'प्रतिमा' नाटक में दशरथ की, 'अभिषेक' नाटक में बालि की, और 'उरुभंग' में दुर्योधन की मृत्यु मंच पर ही अभिनीत होती है। 'स्वप्नवासवदत्तम्' में क्रीड़ा और शयन भी दिखाये गये हैं। इन नाटकों में 'आर्यपुत्र' शब्द का प्रयोग अनेक बार ऐसे अर्थों में हुआ है जो भरत के नाट्यशास्त्र में अविहित है। इन नाटकों की भाषा पर विचार करें तो इनमें कई बार अ-पाणिनीय प्रयोग दिखाई पड़ते हैं। यही नहीं, नाट्यशास्त्र के बाद भी उसकी मान्यताओं को अस्वीकार करते हुए नाटक लिखे गये। जैन परम्पराओं के अनेक नाटक और प्रहसन इसके